श्री मेघमुनि रचित

साह राजसी रासका ऐतिहासिक सार

—श्री भँवरलाल नाहटा

श्वेताम्बर जैन विद्वानों से रचित ऐतिहासिक साहित्य बहुत विशाल एवं विविध है। ऐतिहासिक व्यक्तियों के चरित काव्यके रूप में अनेकों संस्कृत में एवं लोकभाषा में भी सैकड़ों की संख्या में उपलब्ध होते हैं। लगभग तीस वर्ष पूर्व 'ऐतिहासिक राससंग्रह' संज्ञक कुछ ग्रंथ निकले थे जिन में हमारा 'ऐतिहासिक जैन काव्यसंग्रह' अंतिम समझिये। विगत पंद्रह वर्षों में ऐसा प्रयत्न विशेष रूप से नहीं हुआ, यद्यपि ऐतिहासिक रास और चरित्र-काव्य बहुतसे अप्रकाशित हैं, मूलरूप से उनका प्रकाशन तथाविध संग्रहग्रंथ के विक्रय की कमी के कारण असुविधा-प्रद होने से हमने अपनी शोध में उपलब्ध ऐसे ग्रंथों का सार प्रकाशित करते रहना ही उचित समझा। इतः पूर्व 'जैन सत्यप्रकाश' में कई कृतियों का सार प्रकाशित कर चुके हैं। अवशेष करते रहने का संकल्प है।

उज्जैन के सिन्धिया ओरिएण्टल इन्स्टीट्यूट में लगभग दस हजार हस्तलिखित ग्रन्थों का अच्छा संग्रह है। वहां के संग्रहग्रन्थों की अपूर्ण सूचि कई वर्ष पूर्व दो भागों में प्रकाशित हुई थी। उसे मंगाने पर 'साह राजसी रास' मेघमुनि रचित की कृति उक्त संग्रह में होने का विदित हुआ। प्रथम इस रास का आदि-अंत भाग मंगाकर देखा और फिर प्रतिलिपि प्राप्त करने का कई बार प्रयत्न किया पर नियमानुसार इंस्टीट्यूट से प्रति बाहर नहीं भेजी जाती और वहां बैठकर प्रतिलिपि करने वाले व्यक्ति के न मिलने से हमारा प्रयत्न असफल रहा। संयोगवश-गतवर्ष मेरे पितृव्य श्री अगरचंद जी नाहटा के पुत्र भाई धरमचन्द के विवाहोपलक्ष में लश्कर जाना हुआ तो डॉ. बूलचंद जी जैनसे मोतीमहलमें साक्षात्कार हुआ, जो उस प्रान्त के शिक्षाविभाग के सेक्रेटरी हैं। प्रसंगवश सिन्धिया ओरिएण्टल इन्स्टीट्यूट की प्रति के संबंध में बात हुई और हमने अपनी असफलता के बारे में जिक्र किया तो उन्होंने अविलम्ब उसकी प्रतिलिपि भेजने की व्यवस्था कर देने का कहा। थोड़े दिनों में आपकी कृपा से उसकी प्रतिलिपि प्राप्त हो गई जिसका ऐतिहासिक सार यहां उपस्थित किया जा रहा है।

चौबीस तीर्थंकर, गौतमादि १४५२ गणधर, सरस्वती को और गुरुचरणों में नमस्कार करके कवि मेघमुनि राजसी साह के रास का प्रारंभ करते हैं। इस नरपुंगवने जिनालय-निर्माण, सप्त क्षेत्र में अर्थव्यय, तीर्थ-यात्रा, संघपतिपदप्राप्ति आदि कार्यों के साथ साथ सं. १६८७ के महान दुष्काल में दानशालाएं खोलकर बड़ा भारी पुण्यकार्य किया था।

भरतक्षेत्र के २५॥ (साढ़े पच्चीस) आर्य देशों में हालार देश प्रसिद्ध है, जहां के अश्वरत्न प्रसिद्ध होते हैं और श्रीकृष्णका निवासस्थान द्वारामती तीर्थ भी यहीं अवस्थित है। इसी हालार देश के[1] नवानगर नामक

१ हालार देशका वर्णन हमारे संग्रहमें संस्कृत श्लोकोंमें है, वैसे ही संस्कृत काव्यमें भी दिया गया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुन्दर नगर में **जाम श्रीसत्ता नरेश्वर** थे जो बड़े न्यायवान और धर्मिष्ठ थे। उनके पुत्र का नाम श्री जसराज था। इस समृद्ध नगर में बड़े बड़े साहूकार रहते थे और समुद्रतटका बड़ा भारी व्यापार था। नाना प्रकार के फल, मेवे धातु और जवाहरात की आमदनी होती थी। नगरलोक सब सुखी थे। जामसाहबके राज्य में बकरी और शेर एक साथ रहते थे। यहां दंड केवल प्रासादों पर, उन्माद हाथियों में, बंधन वेणीफूल में, चंचलता स्त्री और घोड़ों में, कैदखाना नारी कुचों में, हार शब्द पासों के खेल में, लोभ दीपक में, साल पतंग में, निस्नेहीपना जल में, चोरी मन को चुराने में, शोर नृत्यसंगीतादि उत्सवों में, बांकापन बांस में और शंकालज्जा में ही पायी जाती थी। यह प्रधान बंदरगाह था, व्यापारियों का जमघट बना रहता। ८४ ज्ञातियों में प्रधान ओसवंश सूर्य के सदृश है जिसके शृंगार स्वरूप राजसी शाहका यश चारों ओर फैला हुआ था।

गुणों से भरपूर एक-एक से बढ़कर चौरासी गच्छ हैं। भगवान महावीर की पट्टपरंपरा में गंगाजल की तरह पवित्र अंचलगच्छनायक श्री धर्ममूर्तिसूरि नामक यशस्वी आचार्य के धर्मधुरंधर श्रावकवर्य राजसी और उसके परिवार का विस्तृत परिचय आगे दिया जाता है।

महाजनों में पुण्यवान् और श्रीमन्त भोजासाह हुए जो नागड़ागोत्रीय होते हुए पहले पारकरनिवासी होने के कारण पारकरा भी कहलाते थे। नवानगर को व्यापार का केन्द्र ज्ञात कर साह भोजाने यहां व्यापार की पेढी खोली। जामसाहब ने उन्हें बुलाकर संत्कृत किया और यहां बस जाने के लिए उत्तम स्थान दिया। सं. १५९६ साल में शुभ मुहूर्त में साह भोजा सपरिवार आकर यहां रहने लगे। शेठ पुण्यवान् और दाता होने से उनका भोजा नाम सार्थक था। उनकी स्त्री भोजलदेकी कुक्षि से ५ पुत्ररत्न हुए। जिनके नाम (१) खेतसी (२) जइतसी (३) तेजसी (४) जगसी और ५ वां रतनसी ऐसे नाम थे। सं. १६३१-३२ में दुष्काल के समय जइतसी ने दानशालाएं खोलकर सुभिक्ष किया। तीसरे पुत्र तेजसी बड़े पुण्यवान्, सुन्दर और तेजस्वी थे। इनके दो स्त्रियां थीं। प्रथम तेजलदे के चांपसी हुए, जिनकी स्त्री चांपलदे की कुक्षि से नेता, धारा और मूलजी नामक तीन पुत्र हुए। द्वितीय स्त्री वइजलदे बड़ी गुणवती, धर्मिष्ठ और पतिपरायणा थी। उसकी कुक्षिसे सं. १६२४ मिति मार्गशीर्ष कृष्णा ११ के दिन शुभ लक्षणयुक्त पुत्ररत्न जन्मा। ज्योतिषी लोगों ने जन्मलग्न देखकर कहा कि यह बालक जगत का प्रतिपालक होगा। इसका नाम राजसी दिया गया जो क्रमशः बड़ा होने लगा। उसने पोसाल में मातृकाक्षर, चाणक्यनीति, नामालेखा पढ़ने के अनन्तर धर्मशास्त्र का अभ्यास किया। योग्य वयस्क होने पर सजलदे नामक गुणवती कन्यासे उसका विवाह हुआ। सजलदे के रामा नामक पुत्र हुआ, जिसके पुत्र व कानबाई हुई और सरीआई नामक द्वितीय भार्या थी जिसके भागसिंह पुत्र हुआ।

राजसी की द्वि. स्त्री सरूपदेवी के लांछा, पांची और धरमी नामक तीन पुत्रियां हुईं। तृतीय स्त्री राणबाई भी बड़ी उदार और पतिव्रता थी। तेजसी साह के तृतीय पुत्र नयणसी साह हुए, जिनके मनरंगदे और मोहणदे नामक दो भार्यायें थीं। तेजसीसाहने पुण्यकार्य करते हुए इहलीला समाप्त की। राजसी के अनुज नयणसी के सोमा और कर्मसी नामक दानवीर पुत्रद्वय हुए।

सं. १६६० में जैनाचार्य श्री धर्ममूर्तिसूरिजी नवानगर पधारे। श्रावकसमुदाय के बीच जामनरेश्वर भी वन्दनार्थ पधारे। सूरिमहाराज ने धर्मोपदेश देते हुए भरत चक्रवर्तीके शत्रुंजय संघ निकालकर संघपतिपद प्राप्त करने का वर्णन किया। राजसी साहने शत्रुंजय का संघ निकालने की इच्छा प्रकट की। सं. १६६५ में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लघुभ्राता नयणसी और उनके पुत्र सोमा, कर्मसी तथा नेता, धारा, मूलजी तीनों भ्रातृपुत्रों व स्वपुत्र रामसी आदिके साथ प्रयाण किया। संघनायक वर्द्धमान जी और पद्मसी थे।[२] संघ को एकत्र कर शत्रुंजय की ओर प्रयाण किया। हालार, सिंह, सोरठ, कच्छ, मरुधर, मालव, आगरा और गुजरात के यात्रीगणों के साथ चले। हाथी, घोड़ा, ऊँट, रथ, सिझवालों पर सवार होकर व कई यात्री पैदल भी चलते थे। नवानगर और शत्रुंजय के मार्ग में गंधर्वों द्वारा जिनगुण-स्तवन करते हुए और भाटों द्वारा विरुदावली वखानते हुए संघ शत्रुंजय जा पहुंचा। सोने के फूल, मोती व रत्नादिक से गिरिराज को बधाया गया। रायण वृक्ष के नीचे राजसी साह को संघपतिका तिलक किया गया। संघपति राजसीने यहाँ वहाँ साहमीवच्छल व लाहणादि कर प्रचुर धनराशि व्यय की। सकुशल शत्रुंजय यात्रा कर संघसहित नवानगर पधारे, आगवानी के लिए बहुत लोग आये और हरिणाक्षियों ने उन्हें वधाया।

शत्रुंजय महातीर्थ की यात्रा से राजसी और नयणसी के मनोरथ सफल हुए। वे प्रति संवत्सरी के पारणाके दिन स्वधर्मीवात्सल्य किया करते व सूखड़ी श्रीफल आदि बांटते। जामनरेश्वर के मान्य राजसी साहकी पुण्यकला द्वितीया के चंद्रकी तरह वृद्धिगत होने लगी। एक बार उनके मनमें विचार आया कि महाराजा संप्रति, मंत्रीश्वर विमल और वस्तुपाल तेजपाल आदि महापुरुषों ने जिनालय निर्माण कराके धर्मस्थान स्थापित किए व अपनी कीर्ति भी चिरस्थायी की। जिनेश्वर ने श्रीमुख से इसी कार्य द्वारा महाफल की निष्पत्ति बतलाई है, अतः यह कार्य हमें भी करना चाहिए। उन्होंने अपने अनुज नयणसीके साथ एकांत में सलाह करके नेता, धारा, मूल राज, सोमा, कर्मसी आदि अपने कुटुम्बियों की अनुमति से जिनालय निर्माण कराना निश्चित कर जामनरेश्वर के सम्मुख अपना मनोरथ निवेदन किया। जामनरेश्वरने प्रमुदित होकर सेठ के इस कार्य की प्रशंसा करते हुए मनपसंद भूमिपर कार्य प्रारंभ कर देनेकी आज्ञा दी। संघपतिने राजाज्ञा शिरोधार्य की। तत्काल भूमि खरीद कर वास्तुविदको बुलाकर सं. १६६८, अक्षयतृतीया के दिन शुभलग्न पर जिनालय का खातमुहूर्त किया।

संघपतिने उज्ज्वल पाषाण मंगवाकर कुशल शिल्पियों द्वारा सुघटित करा जिनभवन-निर्माण करवाया। मूलनायकजी के उत्तुंग शिखर पर चौमुख-विहार बनवाया। मोटे मोटे स्तभों पर रंभाकी तरह नाटक करती हुई पुत्तलिकाएं बनवायीं। उत्तर, पश्चिम, और दक्षिण में शिखरबद्ध देहरे करवाये। पश्चिमकी ओर चढ़ते हुए तीन चउमुख किए। यह शिखरबद्ध बावन जिनालय गढकी तरह शोभायमान बना। पूर्व द्वारकी ओर प्रौढ़ प्रासाद हुआ, उत्तरदक्षिण द्वार पर बाहरी देहरे बनवाये। सं. १६६९ अक्षयतृतीयाके दिन शुभ मुहूर्त में सारे नगर को भोजनार्थ निमंत्रण किया गया। लड्डू, जिलेबी, कंसार आदि पक्वान्नों द्वारा नगरजनों की भक्ति की। स्वयं जाम-नरेश्वर भी पधारे। वद्धा-पद्मसीका पुत्र वजपाल और श्रीपाल महाजनोंको साथ लेकर आये। भोजनानंतर सबको लौंग सुपारी, इलायची आदि से सत्कृत किया।

इस जिनालय के मूलनायक श्री शांतिनाथ, व चौमुख देहरी के सम्मुख सहस्त्रफणा पार्श्वनाथ व दूसरे जिनेश्वरों के ३०० बिम्ब निर्मित हुए। प्रतिष्ठा करवाने के हेतु आचार्यप्रवर श्री कल्याणसागरसूरिजी को पधारने के लिए श्रावकलोग विनति करके आये। आचार्यश्री अंचलगच्छ के नायक और बादशाह सलेम-जहांगीर के मान्य थे। सं. १६८५ में आप नवानगर पधारे, देशनाश्रवण करने के पश्चात् राजसी साहने प्रतिष्ठाका मुहूर्त निकलवाया और वैशाख सुदि ८ का दिन निश्चत कर तैयारियां प्रारंभ कर दीं। मध्यमें माणकस्तंभ स्थापित कर

१ इनका चरित्र वर्द्धमान पद्मसी प्रबंध' एवं अंचलगच्छ पट्टावलीमें देखना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मंडपकी रचना की गई। खांड भरी हुई थाली और मुद्राके साथ राजसी साहने समस्त जैनोंको लाहण बांटी। चौरासीन्यात सभी महाजनोंको निमंत्रित कर जिमाया। नानाप्रकारके मिष्टान्न-पक्वान्नादिसे भक्ति की गई। भोजनानंतर श्रीफल दिये गये।

रमणीय और ऊंचे प्रतिष्ठामंडप में केसरके छींटे दिये गये। जलयात्रा महोत्सवादि प्रचुर द्रव्यव्यय किया। सारे नगरकी दुकानें व राजमार्ग सजाया गया। धूपसे बचनेके लिए डेरातम्बू ताने गये, विविध चित्रादि सुशोभित नवानगर देवविमान जैसा लगता था। रामसी, नेता, धारा, मूलजी, सोमा, कर्मसी, वर्द्धमानसुत वजपाल, पदमसीसुत श्रीपाल आदि चतुर्विधसंघके साथ संघपति राजसी सिरमौर थे। जलयात्रा उत्सवमें नाना प्रकारके वाजित्र हाथी, घोड़े पालखी इत्यादिके साथ गजारूढ इंद्रपदधारी श्रावक व इंद्राणी बनी हुई सुश्राविकाएँ मस्तक पर पूर्णकुम्भ, श्रीफल और पुष्पमाला रख कर चल रही थीं। कहीं सन्नारियाँ गीत गा रही थीं तो कहीं भाटलोग बिरूदावली बखानते थे। वस्त्रदान आदि प्रचुरतासे किया जा रहा था। जलयात्रादिके अनन्तर श्री कल्याणसागर-सूरिजीने जिनबिंबोंकी अंजनशलाका प्रतिष्ठा की। शिखरबद्ध प्रासादमें संभवनाथप्रभुकी स्थापना की। सन्निकट ही उपाश्रय बनाया। ईश्वर देहरा, राजकोट-ठाकुरद्वारा, पानीपरब और विश्रामस्थान किये गये। सं. १६८१ में राजसी साहने मूलनायक चैत्यके पास चौमुखविहार बनवाया। रूपसी वास्तुविद्याविशारद थे। इस शिखरबद्ध विशाल प्रासादके तोरण, गवाक्ष, चौरे इत्यादिकी कोरणी अत्यन्त सूक्ष्म और प्रेक्षणीय थी। नाटचपुत्तलिकाएँ कलामें उर्वशीको भी मात कर देती थीं। जगतीमें आमलसार-पंक्ति, पगथिये, द्वार, दिक्पाल, घुम्मट आदिसे चौमंगला प्रासाद सुशोभित था। चारों दिशा में चार प्रासाद कैलासशिखर जैसे लगते थे। यथास्थान बिम्बस्थापनादि महोत्सव संपन्न हुआ।

सं. १६८२ में राजसी साहने श्री गौडी पार्श्वनाथजीके यात्राके हेतु संघ निकाला। नेता, धारा, मूलराज, सोमा, कर्मसी, रामसी, आदि भ्राता भी साथ थे। रथ, गाड़ी, घोड़े ऊंट आदि पर आरोहण कर प्रमुदित चित्तमें श्रीगौड़ी पार्श्वनाथजीकी यात्रा कर सकुशल संघ नवानगर पहुंचा।

सं. १६८७ में महादुष्काल पड़ा। वृष्टिका सर्वथा अभाव होनेसे पृथ्वीने एक कण भी अनाज नहीं दिया। लूट-खसोट, भुखमरी, हत्याएं, विश्वासघात, परिवारत्याग आदि अनैतिकता और पापका साम्राज्य चहुं ओर छा गया। ऐसे विकट समयमें तेजसीके नन्दन राजसीने दानवीर जगडू साहकी तरह अन्नक्षेत्र खोलकर लोगोंको जीवनदान दिया। इस प्रकार दान देते हुए सं. १६८८ का वर्ष लगा और घनघोर वर्षासे सर्वत्र सुकाल हो गया। राजसी साह नवानगरके शांतिजिनालयमें स्नात्रमहोत्सवादि पूजाएँ सविशेष करवाते। हीरा-रत्नजटित आंगी एवं सतरहभेदी पूजा आदि करते, याचकोंको दान देते हुए राजसी साह सुखपूर्वक कालनिर्गमन करने लगे।

मेघमुनिने १६९० मिति पोष वदि ८ के दिन राजसी साहका यह रास निर्माण किया। श्री धर्ममूर्ति-सूरिके पट्टधर आचार्यश्री कल्याणसागरसूरिके शिष्य वाचक ज्ञानशेखरने नवानगरमें चातुर्मास किया। श्रीशांतिनाथ भगवान ऋद्धि-वृद्धि सुखसंपत्ति मंगलमाला विस्तार करें।

साह राजसीके सम्बन्ध में विशेष अन्वेषण करने पर अंचलगच्छकी मोटी पटावलीमें बहुतसी ऐतिहासिक बातें ज्ञात हुईं। लेखविस्तारभयसे यद्यपि उन्हें यहाँ नहीं दिया जा रहा है पर विशेषार्थियोंको उसके पृ. २४८ से ३२४ तकमें भिन्न-भिन्न प्रसंगों पर जो वृत्तान्त प्रकाशित हैं उन्हें देख लेनेकी सूचना दे देना आवश्यक समझता हूँ। □□

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org